न्यायमूर्ति वी. एस. अग्रवाल, जे. के समक्ष

पवन कुमार और अन्य-याचिकाकर्ता

बनाम

किरण और हेमा और अन्य,-उत्तरदाता

***1998* का सी. आर. सं. 3953**

23 अप्रैल, 1999

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश 7 नियम 10-ए-दायर की गए याचिका के लिए लिखित कथन-अदालत के पास कोई क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र नहीं है-याचिका को वापस करने का आदेश दिया गया है-अधिकार क्षेत्र वाले न्यायालय को भेजी गई याचिका-प्रतिवादी ने नया लिखित कथन दायर करने की अनुमति मांगी है-प्रतिवादी को एक नया लिखित कथन दायर करने का अधिकार है।

अभिनिर्धारित किया गया कि एक बार याचिका वापस किए जाने के बाद, प्रतिवादी को एक नया लिखित कथन दायर करने का अधिकार है। यही कारण है कि यह शिकायत की नई प्रस्तुति है और यह पहले के मुकदमे की निरंतरता नहीं है।

(पैरा 11)

याचिकाकर्ताओं की ओर *से अधिवक्ता सी. बी. गोयल।*

राकेश नागपाल, अधिवक्ता, *उत्तरदाताओ की ओर से।*

निर्णय

वी. एस. अग्रवाल, न्यायमूर्ति

(1) यह पवन कुमार सेठी और अन्य लोगों द्वारा दायर एक पुनरीक्षण याचिका है, जिसे इसके बाद 15 जून, 1998 को विद्वत अतिरिक्त सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग), पेहोवा द्वारा पारित आदेश के खिलाफ निर्देशित ''याचिकाकर्ताओं'' के रूप में वर्णित किया गया है। विवादित आदेश के आधार पर, विद्वत निचली अदालत ने याचिकाकर्ताओं के अनुरोध को खारिज कर दिया था जिसमें एक नया लिखित कथन दायर करने की अनुमति मांगी गई थी। यह भी कहा गया कि याचिकाकर्ता इस संदर्भ में इस न्यायालय से स्पष्टीकरण प्राप्त कर सकते हैं।

(2) प्रासंगिक तथ्य यह है कि उत्तरदाताओ ने हिंदू गोद लेने और रखरखाव अधिनियम (संक्षेप में ''अधिनियम'') के तहत भरण-पोषण के अनुदान के लिए एक याचिका दायर की थी। यह जिला न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र की अदालत में दायर किया गया था। याचिकाकर्ताओं ने इसका विरोध किया और जिन आधारों पर विचार किया गया उनमें से एक यह था कि कुरुक्षेत्र का न्यायालय याचिका पर सुनवाई करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। 19 अप्रैल, 1995 को कुरुक्षेत्र के विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने निम्नलिखित आदेश पारित किया थाः—

"सुन लिया गया है। इस भाग्य को महसूस करते हुए कि याचिका पेहोवा में उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी की अदालत में दायर की जानी चाहिए थी, श्री अदलखा ने याचिका को वापस करने और पक्षों को पेहोवा में उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी की अदालत में पेश होने का निर्देश देने के लिए आदेश VII नियम 10-ए सी. पी. सी. के तहत एक आवेदन दायर किया है। इस प्रार्थना का विरोधी पक्ष द्वारा विरोध नहीं किया गया है। इसलिए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी, पेहोवा का न्यायालय सक्षम न्यायालय है और इस याचिका पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है। याचिका को वापस करने का आदेश दिया जाता है। वकील के अनुरोध पर, यह निर्देश दिया जाता है कि याचिका डाक द्वारा उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी, पेहोवा के न्यायालय में भेजी जाए। कागजात अर्थात आदेश पत्र को अभिलेख कक्ष में भेजने का आदेश दिया जाता है, और फाइल को पेहोवा में उप न्यायाधीश प्रथम श्रेणी के न्यायालय में भेजा जाता है। दलों को वहाँ 4 मई, 1995 को उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है।"

(3) याचिकाकर्ताओं ने पेहोवा में दीवानी अदालत में एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें एक नया लिखित कथन दायर करने की अनुमति मांगी गई। यह दावा किया गया कि शिकायत पेहोवा में प्रस्तुत की गई है। कुरुक्षेत्र के न्यायालय में पहले से ही दर्ज लिखित कथन को लिखित कथन के रूप में नहीं माना जा सकता है। याचिकाकर्ताओं को एक नया लिखित कथन दाखिल करने का मूल्यवान अधिकार है।

(4) आवेदन का विरोध किया गया था और यह बताया गया था कि पूरी फाइल विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र के न्यायालय द्वारा पेहोवा भेजी गई है और इसलिए, याचिकाकर्ताओं को एक नया लिखित कथन दायर करने का अधिकार नहीं है।

(5) विद्वत विचारण न्यायालय ने प्रस्तुतियों पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि रखरखाव आदेश के खिलाफ यह न्यायालय पहले ही पुनरीक्षण याचिका पर निर्णय ले चुका है। इस न्यायालय द्वारा 8 अगस्त, 1996 को निर्धारित रखरखाव का भुगतान किया जा रहा है। निचली अदालत की राय थी कि यदि इस स्तर पर अतिरिक्त लिखित कथन दायर करने की अनुमति दी जाती है, तो इसका इस अदालत द्वारा निर्धारित रखरखाव पर प्रभाव पड़ेगा और तदनुसार आवेदन की अनुमति नहीं दी गई थी।

(6) उक्त आदेश से आहत होकर वर्तमान पुनरीक्षण याचिका दायर की गई है।

(7) याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने आग्रह किया और जोरदार तर्क दिया कि जब शिकायत वापस कर दी गई है तो केवल सक्षम अधिकारिता के न्यायालय में प्रस्तुत किया जाना था और इस तरह की फाइल को पेहोवा नहीं भेजा जा सकता था। एक बार जब शिकायत वापस कर दी जाती है, तो इसे प्रस्तुत करने पर याचिकाकर्ताओं को एक नया लिखित कथन दायर करने का अधिकार होता है। सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 7 नियम 10 (संक्षेप में "संहिता") प्रक्रिया निर्धारित करता है और यह निम्नानुसार हैः—

"10. वाद की वापसी-(1) [नियम 10-क के प्रावधानों के अधीन, वाद] वाद के किसी भी स्तर पर उस न्यायालय को प्रस्तुत करने के लिए वापस किया जाएगा जिसमें वाद स्थापित किया जाना चाहिए था।

[व्याख्याः—संदेहों को दूर करने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि अपील या पुनरीक्षण न्यायालय किसी वाद में पारित आज्ञप्ति को दरकिनार करने के बाद, इस उप-नियम के तहत वाद को वापस करने का निर्देश दे सकता है।

(2) शिकायत वापस करने की प्रक्रिया-एक शिकायत वापस करने पर न्यायाधीश उस पर, उसकी

प्रस्तुति की तारीख का समर्थन करेगा और इसे प्रस्तुत करने वाले पक्षों के नाम और इसे वापस करने के कारणों का एक संक्षिप्त विवरण वापस करेगा।"

(8) उपरोक्त प्रावधान के अवलोकन यह दर्शाता है कि जब भी वाद को उस न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए वापस किया जाता है जिसमें मुकदमा दायर किया जाना चाहिए था, तो न्यायाधीश उस पर उसकी प्रस्तुति की तारीख और उसकी वापसी और उसे वापस करने के संक्षिप्त कारणों का समर्थन करेगा। न्यायालय के पास उस न्यायालय में उपस्थित होने के लिए एक तारीख तय करने की शक्ति है जहां उसकी वापसी के बाद शिकायत दायर की जानी है। संहिता के आदेश 7 के नियम 10-ए में प्रक्रिया के बारे में विस्तार से बताया गया है जो इस प्रकार हैः—

"10-A. अदालत में उपस्थिति की तारीख तय करने की अदालत की शक्ति जहां उसकी वापसी के बाद शिकायत दायर की जानी है।:—(1) जहाँ, किसी वाद में, प्रतिवादी के उपस्थित होने के बाद, न्यायालय की राय है कि वाद वापस नहीं किया जाना चाहिए, वह ऐसा करने से पहले, वादी को अपने निर्णय से अवगत कराएगा।

(2)जहां उपनियम (1) के तहत वादी को सूचना दी जाती है, वहां वादी अदालत में आवेदन कर सकता हैः—

(a) उस न्यायालय को निर्दिष्ट करते हुए जिसमें वह शिकायत को उसके वापस आने के बाद पेश करने का प्रस्ताव करता है,

(b) यह प्रार्थना करते हुए कि न्यायालय उक्त न्यायालय में पक्षों की उपस्थिति के लिए एक तारीख तय कर सकता है, और

(c) यह अनुरोध करते हुए कि इस प्रकार निर्धारित तिथि की सूचना उसे और प्रतिवादी को दी जा सकती है।

(3) जहां उपनियम (2) के तहत वादी द्वारा कोई आवेदन किया जाता है, वहां न्यायालय, वाद को वापस करने से पहले और इसके बावजूद कि वाद को वापस करने का आदेश उसके द्वारा इस आधार पर दिया गया था कि उसे वाद का परीक्षण करने की कोई अधिकारिता नहीं है, -

(a) उस न्यायालय में पक्षकारों की उपस्थिति के लिए एक तिथि निर्धारित करें जिसमें वाद प्रस्तुत करने का प्रस्ताव है, और

(b) वादी को और प्रतिवादी को उपस्थिति के लिए ऐसी तारीख की सूचना दें।

(4) जहां उप-नियम (3) के तहत उपस्थिति की तारीख की सूचना दी गई है, -

(a) जिस न्यायालय में वाद उसकी वापसी के बाद विहित किया गया है, उसके लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह प्रतिवादी को वाद में उपस्थित होने के लिए आह्वान पत्र के साथ पेश करे, जब तक कि वह न्यायालय, दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए; अन्यथा निर्देश देता है, और

(b) उक्त सूचना को उस न्यायालय में प्रतिवादी की उपस्थिति के लिए आह्वान पत्र माना जाएगा जिसमें वाद उस न्यायालय द्वारा इस प्रकार निर्धारित तिथि पर प्रस्तुत किया जाता है जिसके द्वारा वाद वापस किया गया था।

(5) जहां अदालत द्वारा उपनियम (2) के तहत वादी द्वारा किए गए आवेदन की अनुमति दी जाती है, वहां वादी को शिकायत वापस करने के आदेश के खिलाफ अपील करने का अधिकार नहीं होगा।''

(9) संहिता के आदेश 7 नियम 10-ए का उद्देश्य देरी से बचना है। न्यायालय वादी को अपने निर्णय के बारे में सूचित कर सकता है जो उस न्यायालय को निर्दिष्ट करते हुए न्यायालय में आवेदन कर सकता है जिसमें वह वाद प्रस्तुत करने का प्रस्ताव रखता है। न्यायालय अन्य न्यायालय में पक्षकारों की उपस्थिति के लिए एक तिथि निर्धारित कर सकता है। इस प्रक्रिया में दोनों पक्षों को नोटिस दिया जाता है। जब वादी को सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय में प्रस्तुत किया जाता है, तो उस न्यायालय के लिए एक नया नोटिस जारी करना आवश्यक होता है।

(10) वर्तमान मामले में, कुरुक्षेत्र के विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने पक्षों को पेहोवा में पेश होने का निर्देश दिया, लेकिन वास्तव में, सभी कागजात और आदेश पत्र को उस अदालत में भेजने का निर्देश दिया और वह भी डाक द्वारा। इसमें लिखित बयान शामिल था। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि एक बार शिकायत वापस होने के बाद, प्रतिवादी को एक नया लिखित कथन दायर करने का अधिकार मिलता है ।यही कारण है कि यह शिकायत की नई प्रस्तुति है और यह पहले के मुकदमे की निरंतरता नहीं है। इस संबंध में, अमर चंद इनानी बनाम भारत संघ,[1] के मामले में *निर्णय का उल्लेख* किया *जा सकता है। इसमे एक* समान तर्क दिया गया था जैसा कि उत्तरदाताओं द्वारा कहा जा रहा है। यह अभिनिर्धारित किया गया कि यह मुकदमे की निरंतरता नहीं थी और इसे मुकदमे की एक नई प्रस्तुति माना जाता है। उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः—

'' हालाँकि, अपीलार्थी के वकील ने तर्क दिया कि उचित न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए वापस किए जाने के बाद वाद प्रस्तुत करके विचारण न्यायालय में शुरू किया गया वाद करनाल न्यायालय में दायर किए गए वाद की निरंतरता थी और इसलिए, करनाल न्यायालय में दायर किए गए वाद को विचारण न्यायालय में दायर किया गया माना जाना चाहिए। हम समझते हैं कि तर्क में कोई सार नहीं है, क्योंकि जब वाद को उचित न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए वापस किया गया था और उस न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था, तो वाद को उचित न्यायालय में तभी स्थापित किया जा सकता है जब उस न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की गई थी। दूसरे शब्दों में, पानीपत न्यायालय द्वारा वापस की गई शिकायत की प्रस्तुति द्वारा निचली अदालत में शुरू किया गया मुकदमा करनाल न्यायालय में दायर मुकदमे की निरंतरता नहीं थी (देखने वाले निर्णय हीराचंद सुकाराम गांधी बनाम जी. आई. पी. रेल्वे निगम AIR 1928 Bom 421, बिमला प्रसाद मुखर्जी बनाम लाल मोनी देवी, AIR 1926 Cal 355 और राम किशन बनाम आशीर्वाद, ILR 29 Pat 699=(AIR 1950 Pat 478)। इसलिए, 2 मार्च, 1959 को करनाल न्यायालय में वाद की प्रस्तुति को उस दिन निचली अदालत में इसकी प्रस्तुति नहीं माना जा सकता है।''

(11) हनमनथप्पा और अन्य बनाम चंद्रशेखरप्पा और अन्य,[2] के मामले में उच्चतम न्यायालय के हाल के *फैसले में* भी *यही विचार प्रचलित* है। इसमें एक दीवानी मुकदमा दायर किया गया था। अभियोग को उचित न्यायालय में प्रस्तुत करने के लिए वापस कर दिया गया था। वादी ने वाद में आवश्यक संशोधन करने के बाद वाद का प्रतिनिधित्व किया।प्रतिवादी ने याचिका दायर की कि शिकायत में संशोधन नहीं किया जा सकता है। सुप्रीम कोर्ट ने अभिनिर्धारित किया कि यह एक नया वाद है और संशोधन किया जा सकता है और वाद प्रस्तुत किया जा सकता है। फैसले के पैराग्राफ 3 में, सुप्रीम कोर्ट ने निम्नानुसार निर्णय दिया:—

> " वास्तव में, यह एक नया मुकदमा है जो सीमा, आर्थिक अधिकार क्षेत्र और न्यायालय शुल्क के भुगतान के अधीन दायर किया गया है जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा सही बताया गया था। इसलिए इसे इस आधार पर खारिज नहीं किया जा सकता है कि वादी ने ऐसे कथन किए जिन्हें जिला मुन्सिफ, नवलगुंड के न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत मूल वाद में स्थान नहीं मिला। वादी के लिए आदेश VI, नियम 17 सी. पी. सी. के तहत वाद में संशोधन की मांग करना हमेशा आवश्यक नहीं होता है। अधिक से अधिक इसे एक नया वाद माना जा सकता है और मामले को कानून के अनुसार आगे बढ़ाया जा सकता है। उन परिस्थितियों में, हमें नहीं लगता कि उपरोक्त निर्देश देने में उच्च न्यायालय द्वारा कानून की कोई त्रुटि की गई है।"

(12) जब नया वाद प्रस्तुत किया जाता है तो इसके विपरीत भी सच होगा। याचिकाकर्ताओं को नया लिखित कथन दाखिल करने का अधिकार था। ऐसा इसलिए है क्योंकि यह एक शिकायत थी जिसे पेहोवा में नए सिरे से पेश किया जाना था।

(13) उत्तरदाताओं की ओर से, हालांकि, यह आग्रह किया गया था कि अंतरिम रखरखाव के अनुदान के आदेश के खिलाफ इस न्यायालय में एक पुनर्विचार याचिका दायर की गई थी। यह 8 अगस्त, 1996 को तय किया गया था। अंतरिम रखरखाव की अनुमति दी गई है। विद्वान वकील के अनुसार, इसलिए, कोई भी उस आदेश को दरकिनार नहीं कर सकता है।

(14) वास्तव में, इस स्तर पर, यह प्रश्न अप्रासंगिक है। शिकायत को फिर से प्रस्तुत करने के बाद, याचिकाकर्ताओं ने पेहोवा की अदालत में एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें एक नया लिखित बयान दायर करने की अनुमति मांगी गई। यह 26 सितंबर, 1995 को दाखिल किया गया था। यह 15 जून, 1998 को विद्वत विचारण न्यायालय द्वारा तय किया गया था। इस प्रकार अधिकार को माफ नहीं किया गया था। यदि कोई अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसका फाइल पर पहले से मौजूद लिखित कथन पर कोई प्रतिबिंब नहीं है।तदनुसार, एक बार जब याचिकाकर्ताओं के पास अधिकार था और जिसे माफ नहीं किया गया था, तो इसे केवल इसलिए लिया जाएगा क्योंकि रखरखाव के लिए अंतरिम आदेश पारित किया गया है।

(15) फिर भी एक और तर्क यह था कि याचिकाकर्ताओं ने इस न्यायालय द्वारा रखरखाव तय करने के उस आदेश को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी थी। आदेश को उच्चतम न्यायालय के आदेश में मिला दिया गया है और यह न्यायालय इसकी समीक्षा नहीं कर सकता है।

श्री नारायण धर्म संगम ट्रस्ट बनाम स्वामी प्रकाशानंद और अन्य के *मामले में दिए गए निर्णय पर* भरोसा *रखा गया था।*[3] *उक्त प्रस्ताव* पर कोई विवाद नहीं है। लेकिन यहाँ, उक्त आदेश को दरकिनार नहीं किया जा रहा है। केवल नए लिखित कथन दायर करने की अनुमति है जो याचिकाकर्ताओं का अधिकार था और जिसे माफ नहीं किया गया था। उक्त निर्णय उत्तरदाताओं के बचाव में नहीं आएगा।

(16) इन कारणों से, पुनरीक्षण याचिका को खारिज कर दिया जाता है और विवादित आदेश को रद्द कर दिया जाता है। याचिकाकर्ताओं को उस शिकायत के समक्ष अपना लिखित कथन दाखिल करने की अनुमति है जिसे फिर से प्रस्तुत किया गया है।

एस.सी. के.

न्यायाधीश वी. एस. अग्रवाल के समक्ष

रंजीत सिंह,-याचिकाकर्ता

बनाम

गुरुनाम सिंह और अन्य,-*उत्तरदाता*

***1998* का सी. आर. सं. 674**

22 सितंबर, 1998

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश 9 नियम 8-एक बार आदेश 9, नियम 8 के तहत मुकदमा खारिज हो जाने के बाद-वादी को कार्रवाई के समान कारण के संबंध में एक नया मुकदमा लाने से रोक दिया गया-प्रावधान अनिवार्य हैं।

अभिनिर्धारित किया कि यदि कार्रवाई का कोई निरंतर कारण है, तो दूसरा मुकदमा वर्जित नहीं किया जाएगा। अन्यथा, कार्रवाई के पहले के कारण के संबंध में दूसरा मुकदमा वर्जित है, यदि पहले का मुकदमा संहिता के आदेश 9, नियम 8 के तहत खारिज कर दिया गया था। बेशक, यह योग्यता के आधार पर निर्णय नहीं है और यह न्यायिक आधार पर काम *नहीं करेगा*, लेकिन मुकदमा दायर करने की अनुमति नहीं होगी।

(पैरा 13)

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908-आदेश 9, नियम 8-निषेधाज्ञा के लिए पहले का मुकदमा-यदि दूसरा मुकदमा भी इसी तरह की धमकी पर निषेधाज्ञा के लिए है तो बाद के मुकदमे को बाधित नहीं किया जाएगा।

मान लिया कि पहले का मुकदमा भी निषेधाज्ञा के लिए था। वास्तव में, निषेधाज्ञा की मांग एक निरंतर

[3] J.T. 1997 (5) S.C. 100

कारण है। अगर इसी तरह की धमकी आती है

(अस्वीकरण: स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय, वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके, और किसी अन्य उद्देश्य के लिया इसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।)

रवि अमितोज़
प्रशिक्षु न्यायिक
अधिकारी